14

भाषा, संज्ञान और समझ: आरम्भिक पड़ताल

यह लेख संगीत, भाषा एवं गणित विषय पर 2009 में विद्या भवन सोसाइटी, उदयपुर में आयोजित संगोष्ठी में हुई चर्चाओं पर आधारित है। लेख भाषा, संज्ञान और समझ के प्रारम्भिक पहलुओं का परिचय देते हुए इस बात पर सोचने को कहता है कि भाषा सीखने की इन्सान की क्षमता एक विशिष्ट व अन्य क्षमताओं से विलग एक विलक्षण नैसर्गिक क्षमता है अथवा यह अन्य क्षमताओं की तरह ही एक नैसर्गिक प्रदत्त क्षमता है। यह इस बात पर भी ध्यान आकर्षित करता है कि इन्सान में भाषा की उपस्थिति का सबसे प्रमुख कारण प्रजातिगत शारीरिक संरचना है या फिर उसकी शुरूआत इन्सान की मिलजुलकर काम करने की आवश्यकता व उससे जनित इन्सानी प्रकृति के विकास के कारण हुई है।

भाषाई अर्जन

छोटे बच्चों द्वारा समाज में स्वतः होने वाले भाषा अर्जन के बारे में बहुत बात होती है लेकिन इसी दौरान व इसके साथ-साथ वे गणित व संगीत में भी कई अवधारणाओं का अर्जन कर लेते हैं। बच्चे ये अवधारणाएँ कैसे अर्जित करते हैं, इस सवाल के महत्व की छान-बीन के लिए इन्सानी क्षमताओं व अन्य प्राणियों की क्षमताओं पर उपलब्ध समझ को खंगालने की आवश्यकता है। कुछ सवाल भी हैं, जैसे, क्या जानवर भी संगीत, गणित की कुछ बुनियादी अवधारणाओं का अर्जन कर लेते हैं? यदि वे कुछ हद तक कर लेते हैं तो संगीत व गणित की क्षमताओं से इन्सान के जुड़ाव व जानवरों से इनके जुड़ाव में क्या फर्क है? इन सवालों के बारे में और अधिक छानबीन की आवश्यकता है। जैसे, क्या इन्सान की संज्ञान क्षमता जानवरों से बहुत फर्क है? या फिर सहयोग करने की मंशा व क्षमता बहुत फर्क है? या फिर इन्सानों व जानवरों की गणित व संगीत की क्षमता में यह फर्क उनमें भाषाई क्षमता के अन्तर

के कारण है? यानी भाषाई यंत्र (Language Aquisition Device) की उपस्थिति अथवा अभाव के कारण? सवाल यह है कि क्या इन अवधारणाओं व क्षमताओं का अर्जन कर पाने में इन्सान की प्रजातिगत भाषाई योग्यता सबसे महत्वपूर्ण कारक है? क्या भाषा का होना ही सभी क्षेत्रों में इन्सानी समझ के विकास का सबसे प्रमुख कारण है? या फिर इस इन्सानी समझ को बनाने में भाषाई क्षमता से इतर कुछ अन्य क्षमताओं की भी भूमिका है? और नैसर्गिक भाषाई क्षमता किसी एक बड़े क्षमता समूह का हिस्सा है या फिर यह भाषाई क्षमता स्वयं भी कुछ अन्य क्षमताओं द्वारा प्रदत्त क्षमता है?

क्या यह इन्सानी प्रवृत्तियों के कारण है? जैसे उनकी मिलजुल कर काम करने की प्रवृत्ति के कारण? क्या यह सकर्मकत्व[2] (Intentionality) की भावना के कारण है? ये दोनों ही काफी हद तक जानवरों के पास नहीं हैं और वही अर्जन का मूल कारण हो सकता है। हम यह जानने का प्रयास भी कर सकते हैं कि क्या सकर्मकत्व व भाषा दोनों ही स्वतंत्र रूप से इन्सान के पास हैं व मिलकर सीखने का बड़ा कारण हैं। एक बड़ा प्रश्न यह है कि भाषाई योग्यता और संज्ञानात्मक योग्यताओं में क्या सम्बन्ध है? क्या ये एक-दूसरे से विलग हैं और विलग ही विकसित होती हैं अथवा ये एक-दूसरे के साथ-साथ विकसित होती हैं? एक अन्य पहलू जो इससे जुड़ा है, वह इन्सान में सकर्मकत्व के साथ उत्कण्ठा का होना है। इन्सान के सोचने, मनन करने, जटिल विचारों को उत्पन्न कर पाने, उनका विश्लेषण कर पाने के गुण - जो संज्ञान के तहत आते हैं - इन सब में भाषा की भूमिका महत्वपूर्ण है लेकिन साथ ही सकर्मकत्व व उत्कण्ठा का होना भी अहम है। टोमासेलो और साथी मानते हैं कि यह ही इन्सान के सीखने का आधारभूत कारण है व भाषा का विकास भी इन्हीं से शुरू हुआ (टोमासेलो, 1999 व 2014)। कुल मिला कर जिस भी दृष्टिकोण से देखें भाषा, संज्ञान, ज्ञान सृजन व संयोजन आदि में गहरे अन्तर्सम्बन्ध हैं।

इन्सानी भाषाई योग्यता की विशेषताएँ

इन्सान की क्षमताओं के बारे में सोचें तो एक मुख्य बात दिखाई देती है कि उसमें अपने विचारों को व अपने आपको भी विस्थापित करने की योग्यता होती है। यह विस्थापन भौतिक नहीं बल्कि मानसिक है, यानी आप यहाँ बैठे-बैठे, किसी भी देश-काल के बारे में सोच सकते हैं व कल्पना कर सकते हैं। यानी 'यहाँ और अब' (here and now) से आगे अपनी तात्कालिक स्थिति से परे जाने की योग्यता इन्सान में है, और यह शुरुआती बिन्दु है। यह भी कि 'यहाँ और अब' की तात्कालिक स्थिति से अपने आप को दूर कर पाने की इस योग्यता की अपनी ज़रूरतें, निहितार्थ और परिणाम भी हैं। चीज़ों की अनुपस्थिति में उनके बारे में बात कर पाना व उनका विवरण दे पाना ताकि कोई और भी उनके बारे में समझ सके - यह योग्यता, संज्ञानात्मक योग्यता (जैसे, चीज़ों का अवलोकन कर के उनके सारतत्व या उनको परिभाषित करने वाले लक्षणों को अलग कर पाना) से विकसित भी होती है और संज्ञानात्मक योग्यता को बढ़ाती भी है। चीज़ों अथवा घटनाओं का केवल विवरण देने की बजाय, विचारों की जटिलता को साझा करना अमूर्तता की ओर बढ़ते चले जाने की काबिलियत व साथ ही शक्तिशाली

2 स्वयं अथवा दूसरों के साथ मिलकर कुछ करने की योजना बनाने की वैचारिकता

अभिव्यक्ति की माँग करता है। भाषा में यह योग्यता वाणी के स्तर पर उपयोग की जाती है। बोली जाने वाली भाषा में मदद के लिए अतिरिक्त साधन भी होते हैं, खासकर तब जब वक्ता और श्रोता एक-दूसरे की नज़र में हों और एक ही सन्दर्भ में बात कर रहे हों। भाव-भंगिमाएँ व मुद्राएँ भी कहे गए कथनों के अर्थ में बहुत-सी विषयवस्तु जोड़ देती है। इसी तरह, बोलने के लहज़े (Tone) व लय में भी अर्थ होता है और यह एक सहायक की तरह काम करता है। नज़र में होने से इशारे व संकेत भी इसमें बहुत मदद करते हैं। लिखित भाषा में यह सब (लय, लहज़ा, भाव-भंगिमाएँ आदि) नहीं होता अत: इसमें अतिरिक्त अमूर्तता की आवश्यकता होती है। और इन्सानों के क्षमतावर्धन के सन्दर्भ में यह अहम है। वर्तमान में केवल इन्सान ही हैं जो इन सब से आपस में जुड़ सकते हैं। अत: हमें इन तत्वों को खोजने की आवश्यकता है, साथ ही हमें यह भी देखना होगा कि इनके निहितार्थ क्या हैं और इन्सानों में इन तत्वों का विकास कैसे हुआ है। इनके निहितार्थ असंख्य हैं और बहुत से तो इतने ज़ाहिर भी नहीं हैं। ये निहितार्थ काफी महत्वपूर्ण भी हैं क्योंकि ये इन्सानों को इतिहास, संस्कृति, साहित्य आदि निर्मित करने की समझ देते हैं और अपने आप के बारे में चिन्तन (Meta-reflection) करने की भी। इसी के दूसरे छोर पर है उसकी कल्पना – यानी जो नहीं है और जिन चीज़ों में कोई सम्बन्ध अभी नहीं है, उन्हें आपस में सम्बन्धित करके देख पाना। यह कार्य-कारण सम्बन्ध के ढाँचे से बहुत आगे चला जाता है। स्वयं को क्या हो रहा है, इस बारे में ज्ञान और अपने निकटवर्ती व दूरवर्ती भविष्य में क्या होना चाहिए, इस बारे में पहले से ही निर्णय ले लेने की योग्यता हमें ऐसा कुछ देती है जिसे सचेतता या पहचान की भावना कहा जा सकता है। हम यह भी देख सकते हैं कि यह भाषा व गणित सीखने के लिए बुनियादी है। चलिए कुछ ऐसे तत्वों को देखते हैं जो इनका गठन करते हैं। मेरे विचार से इसे समझने के लिए हमें इन तीन लड़ियों के बारे में विचार करना होगा। पहली लड़ी को देखते हैं। यह उन क्षमताओं के अर्जन की लड़ी है जो एक चार साल के बच्चे के पास होती है। इस लड़ी के विभिन्न पहलू क्या हैं और भाषा व इन्सान के सम्बन्ध के बारे में यह हमें क्या बताती है?

दूसरी लड़ी होगी इसके अर्जन का तरीका और इस अर्जन को प्रभावित करने वाले कारक। उदाहरण के लिए, क्या यह अन्य इन्सानों से संज्ञानात्मक तौर पर जुड़ने की इच्छा व सामर्थ्य है या क्या यह भाषा सीखने की बुनियादी योग्यता है जो इसके सत्व (Core) को बनाती है। और तीसरी लड़ी है वह तरीका जिससे इन योग्यताओं की वृद्धि व विकास होता है और ये एक-दूसरे से जुड़ती हैं और जुड़कर इन्सानों को बहुत से अन्य सामर्थ्य जैसे अमूर्तता, विस्थापन, बहुआयामी चिन्तन (Decentration), कल्पना व ऐसी अन्य योग्यताएँ देती हैं।

आखिर चार साल का बच्चा यह सब कैसे सीख जाता है

हम चार साल के बच्चों की योग्यताओं से बात शुरू कर सकते हैं। बच्चे की भाषाई क्षमता हमें आश्चर्य में डाल देती है। इतना सब कुछ इतने कम समय में कैसे अर्जित किया जा सकता है? यह असाधारण भाषाई योग्यता जो एक बच्चे के पास होती है, इसके बारे में कई जगहों पर चर्चा की गई है। यहाँ यह कहना पर्याप्त होगा कि सभी उपलब्ध प्रमाण इस तथ्य को दर्शाते हैं कि यदि इन्सानों के साथ अन्त:क्रिया नहीं हो तो यह योग्यता विकसित नहीं होती और

इसलिए यह कहा जाता है कि बच्चे यह योग्यता अपने समुदाय व माहौल से अन्त:क्रिया कर अर्जित करते हैं। यहाँ यह दर्ज करना महत्वपूर्ण है कि भाषा की ही तरह बहुत से अन्य विचार व धारणाएँ भी अर्जित किए जाते हैं। उदाहरण के लिए, बच्चों द्वारा जो गणितीय योग्यताएँ प्रदर्शित की जाती हैं वे भी असाधारण होती हैं, हालाँकि वे यह नहीं जानते कि औपचारिक गणित के अन्तर्गत उन्हें कैसे किया जाएगा। परिमाण की दृष्टि से देखें तो बच्चे के पास न केवल संख्याओं की समझ होती है बल्कि आकार या माप की भी समझ होती है। कितनी गणित अर्जित की जाती है यह तथ्य इस बात से जुड़ता है कि बच्चे अपने आसपास की जगह को किस तरह व्यवस्थित कर लेते हैं। परिमाण की दृष्टि से और जगह की दृष्टि से देखें तो वे क्या ज़्यादा है, क्या कम है - ये सभी तथ्य व अन्य गणितीय अवधारणाएँ अर्जित कर लेते हैं। इसके साथ ही कार्य-कारण सम्बन्धी और उद्‌देश्यपूर्ण क्रियाओं के परिणाम क्या हो सकते हैं, इससे सम्बन्धित योग्यताएँ भी काफी जटिल स्तर तक आ जाती हैं। और यह सब भी इन्सान समाज में औरों के साथ रहकर अर्जित करते हैं ।

इसी के साथ-साथ उनमें किसी के साथ सम्बद्ध होने (रिश्ते बनाने, उन्हें अलग-अलग श्रेणियों में व सहव्यवहार के अलग-अलग स्तरों में बाँटने), जुड़ाव बनाने, बातचीत करने और वयस्क व बच्चों समेत दूसरे लोगों के साथ मिलकर काम करने की योग्यताएँ भी आ जाती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ये योग्यताएँ एक-दूसरे के साथ मिलकर विकसित होती हैं। जैसे-जैसे ये योग्यताएँ विकसित होती हैं, इनके साथ भाषाई योग्यता भी और अधिक विकसित होती जाती है और इन सभी के बीच सम्बन्ध भी प्रगाढ़ होते चले जाते हैं। सामान्य संज्ञानात्मक योग्यता भी बढ़ती जाती है जिसके बारे में हम आगे बात करेंगे। एक महत्वपूर्ण योग्यता जो इन सभी योग्यताओं में सन्निहित होती है, वह है पैटर्न को जानना। भाषिक अर्थ, वाक्य विन्यासात्मक संरचनाएँ, कार्य-कारण सम्बन्ध, मंशाओं की अवस्था, वर्गीकरण, नई चीज़ों को ढूँढना अथवा नई चीज़ों की रचना करना इत्यादि सभी पैटर्न पहचानने की योग्यता के कारण ही हो पाता है। एक और पहलू है जिसके बारे में सोचना चाहिए और वह है आधारभूत लय (Rhythm)। यह असल में ध्वनि का ही पैटर्न है जो विभिन्न मूल तत्वों, मसलन, समय, अवधि, ताल (Beat), आवृत्ति (Frequency) आदि के उपयोग से आता है। संगीत कुछ ऐसा है जो मैं बिलकुल नहीं समझता। अत: संगीत में एक चार साल की बच्चा/बच्ची क्या-क्या सराह पाती है और संगीत को सीखने और उसमें मज़ा लेने के लिए क्या-क्या आवश्यक है, इस सन्दर्भ में सोचना मैं उन लोगों पर छोड़ता हूँ जो इसके बारे में ज़्यादा जानते हैं।

इन्सान में सीखने के बुनियादी तत्व

संगीत को सराहने, सीखने और उसका आनन्द लेने - इन सभी योग्यताओं के विकसित होने के लिए क्या तत्व होंगे, इस बारे में हमें सोचने की आवश्यकता है क्योंकि इन्सान के बच्चे में संगीत के लिए, लय-ताल के लिए एक सहज लगाव होता है, और यही लगाव सममिति व सौन्दर्य के लिए भी होता है। इन्सान संगीत से अपने जुड़ाव को कैसे देखते हैं और जानवर संगीत से कैसे जुड़ाव देखते हैं, इनको भी अलग-अलग कर छानबीन करने की आवश्यकता है ताकि हरेक की विलक्षणता को देख पाएँ। यदि इनमें भी कोई बड़ा फर्क है, वैसा जैसा अमूर्त

सोच, विस्थापन, कल्पना आदि में है तो फिर मेरे लिए महत्वपूर्ण पहलू यह है कि इन्सानों के पास यह कैसे आता है और कैसे वे अपने आप को समृद्ध करने के लिए इसका लगातार उपयोग करते हैं? इसलिए यहाँ यह प्रश्न है कि इस सीखने की प्रकृति क्या है, यह सीखना हमारे शरीर में कहाँ होता है और यह विकसित कैसे होता है? दूसरे शब्दों में इसका आरम्भ बिन्दु या स्रोत क्या है?

यह देखने की ज़रूरत है कि क्या इन्सान के बच्चे के पास ऐसा कुछ खास है जो उसे यह सब करने के योग्य बनाता है। जब हम इस बारे में सोचते हैं तो पाते हैं कि शायद इन्सान के दिमाग में प्रजातिगत योग्यताओं का एक समुच्च्य है जो जानवरों से फर्क है। यह योग्यता समुच्च्य हमें दुनिया का एक फर्क अर्थ देती है और साथ ही, इससे दुनिया के साथ हमारा एक फर्क तरह का सम्बन्ध बनना भी सम्भव होता है। हो सकता है जानवरों के पास भी इसी तरह की योग्यता हो लेकिन वह अपरिपक्व अवस्था में हो। निश्चित रूप से उनके पास इस तरह की पर्याप्त योग्यताएँ नहीं होतीं जो उन्हें सिलसिलेवार, समरूप, अनुकूल व संगत प्रदर्शन के योग्य बना सकें। हालाँकि यह आक्षेप लगाया जा सकता है कि यह एक चक्रीय तर्क है। हमारे पास अन्य जीवों की क्षमताओं का कोई ऐसा अध्ययन नहीं है जैसा कि इन्सानी क्षमताओं के हैं। शायद हम उनके ज्ञान को पहचानने का सही तरीका भी नहीं जानते। पर हम अपने बारे में कह सकते हैं और मुझे लगता है यह महसूस भी किया जा सकता है। इन्सानी ज्ञान को बहुत कुछ बिना अध्ययन किए भी हम सहज ज्ञान से ही महसूस कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, किसी चीज़ के विवरण को प्रस्तुत करने में किसी विचार को व्यक्त करने में एक बड़ी ज़रूरत यह है कि हम दुनिया के बारे में व्यवस्थित रूप से बिन्दुओं को क्रम में रख सकें। हम इस पर बात करने में भी समर्थ हैं कि जो प्रत्यक्ष है उसमें और उसके अलावा और क्या हो सकता है। और भी खास बात यह है कि हम इस सबके बारे में सोच सकते हैं, चिन्तन-मनन कर सकते हैं और यह भी सोच सकते हैं कि किसी वस्तु के साथ, किसी परिस्थिति में कैसे-कैसे व्यवहार हो सकते हैं। उन सम्भावनाओं को व्यक्त कर सकते हैं, उनमें से अपने व परिस्थिति के अनुकूल चुन सकते हैं व उसके लिए तर्क दे सकते हैं। यह भी सोच सकते हैं कि किसी और ने जो किया वह किस तरह से अलग व्यवहार कर सकता था। यानी न सिर्फ अपने बारे में वरन् औरों के बारे में भी सोच सकते हैं।

मिलजुल के काम करने की प्रवृत्ति व इन्सानी क्षमताएँ

यह जो क्षमता हमारे अन्दर मौजूद है, वही हमारे मिलजुलकर साथ काम कर पाने का आधार है। एक दूसरे के बारे में सोच व समझ पाने की, आपसी कार्यों को विश्लेषित कर पाने की, इस सब को प्रकट कर पाने की जो एक खास प्रत्यक्ष योग्यता है उसी से यह निकलता है कि हम साझा काम-काज में हिस्सा ले सकते हैं। और ऐसा हो सकता है कि इस कार्यक्रम में, इस प्रयोजन में और भी बहुत से लोग शामिल हों लेकिन ऐसी स्थिति में भी हरेक की अपनी व्यक्तिगत ज़िम्मेदारी, उद्देश्य की समझ और सृजनात्मकता हो सकती है। उनकी भूमिका व पारस्परिक सम्बन्ध भी समान नहीं होंगे। यानी एक बड़े समूह का हिस्सा होते हुए भी व्यक्तिगत कुछ होगा और साझा सकर्मकत्व भी होगा। तर्क यह हो सकता है कि मिलजुलकर

कार्य करने और साझा सकर्मकत्व की योग्यता व उत्कण्ठा ही मूल स्रोत है। सकर्मकत्व को समझ पाने की काबिलियत व उसमें बढ़ती जटिलता के स्तर पर शामिल होना संज्ञानात्मक योग्यता से ही उत्पन्न होता है व बढ़ता है। इसके लिए यह महत्वपूर्ण है कि आपके पास अन्य इन्सानों के साथ साझा सकर्मकत्व की योग्यता व उत्कण्ठा होती है। और यह दोनों अन्य इन्सानों के पास भी हैं। पर क्या यह योग्यता सिर्फ इन्सानों के पास है?

इसके उत्तर में टोमासेलो (1999, 2014) तर्क करेंगे कि जानवरों में भी अन्य जानवरों के सकर्मकत्व की समझ होती है। लेकिन ये साथ मिलकर काम नहीं कर सकते और न ही उनमें सम्बद्ध होकर व्यवहार करने की उत्कण्ठा बन पाती है। यह अधिकांशत: नैसर्गिक (Instinctual) प्रतिक्रियाओं जैसी होती हैं। जैसे कि एक शिकारी को अपने शिकार की हलचल और प्रतिक्रियाओं के बारे में जानकारी ग्रहण करके ध्यान में रखनी होती है। यह क्षमता प्रजातिगत होती है और एक सीमा के अन्दर भी और इसका एक प्रजातिगत प्रकार होता है।

बिलकुल शुरुआत में इन्सानी समूहों को अपनी रक्षा व शिकार के प्रयोजन के लिए सकर्मत्व की ज़रूरत हुई। उस समय इन्सानों के समूह छोटे थे व उनमें जटिलताएँ भी कम थीं। शिकारियों को शिकार के प्रयोजन व मंशा को समझना होता है ताकि वह उसकी अगली चाल को महसूस कर सके व उसमें अक्सर एक ही मोर्चा व एक ही तरह की योजना कार्य कर जाती है। हालाँकि कुछ अन्य जीव जैसे लकड़बग्घे, भेड़िये भी झुण्ड बनाकर शिकार करते हैं, किन्तु उनकी भूमिकाएँ बहुत अलग-अलग होती हैं और वैसी विशिष्ट नहीं होतीं जैसे इन्सानी समूहों के शिकार में। इस शिकार की क्षमता से ही धीरे-धीरे इन्सानी कबीला युद्ध तक व उसे जीत सकने की क्षमता विकसित करने तक गए। इन्सानी युद्ध में यह सब बहुत जटिल हो जाता है और एक अलग ढंग के सकर्मत्व की ज़रूरत होती है। कुल मिलाकर जहाँ शिकार के मामले में भी सकर्मत्व की ज़रूरत के चलते संज्ञान व सकर्मत्व की क्षमता के विकास के लिए आवश्यक अन्य पहलूओं का विकास होता है, उससे बहुत अधिक युद्ध में होता है, चूँकि दूसरी तरफ भी सकर्मत्व और बेहतर होती युक्तियाँ हैं। हम यह कह सकते हैं कि न सिर्फ किसी दल की युद्ध जीतने की सीमाएँ उसकी संज्ञानात्मक योग्यताओं द्वारा निर्धारित होती हैं, वरन् युद्ध की सीमाएँ भी उसमें शामिल दलों की संज्ञानात्मक योग्यताओं द्वारा निर्धारित होती हैं।

जैसा कि ऊपर उदाहरण में आया था, भेड़िये भी एक साथ मिलकर शिकार करते हैं परन्तु उनकी कार्य व्यवस्था व भागीदारी इन्सानों से फर्क होती है। इन्सानों में भेड़ियों से कहीं अधिक व अलग ढंग की साझा सकर्मकत्व और मिलजुलकर कार्य करने की प्रवृत्ति (Instinct) व क्षमता है (यह 'प्रदत्त' है अथवा उन्होंने इसे 'अर्जित' किया है, यह बहस का विषय हो सकता है)। जैसा कि टोमासेलो कहेंगे, भेड़िये एक लक्ष्य की ओर तो बढ़ते हैं, पर यह लक्ष्य भी व्यक्तिगत होता है और लक्ष्य की ओर बढ़ना भी व्यक्तिगत ही होता है चाहे वे एक साथ झुण्ड में होते हों। हालाँकि व्यवहार का कुछ साझा पैटर्न भी उन्होंने विकसित किया है जो इस प्रक्रिया में शामिल है। लेकिन इन्सानों के पास इससे बहुत कुछ ज़्यादा है। वे सामूहिक लक्ष्य तय करते हैं और ऐसे सरल व जटिल काम साथ करते हैं, जिसके लिए उनको एक साझा, सहकारी कार्य योजना की ज़रूरत होती है। और इसलिए वे दूसरे व्यक्तियों को अपना प्रयोजन समझाना भी

चाहते हैं। यानी यह शिकार और शिकारी के बीच एक-दूसरे के प्रयोजन को पढ़ने व समझने जैसा नहीं होता - जहाँ किसी को पकड़ने और किसी को छुपने की उत्कण्ठा होती है जिसमें अपनी मंशा व अपने अगले कदम को आप दूसरे को पता नहीं लगने देना चाहते। यह भेड़ियों के झुण्ड जैसा भी नहीं, जहाँ यह कुछ खास पैटर्नों में बँधी होती है। इसके विपरीत इन्सानों में प्रयोजन को अपने बहुत से साथियों को स्पष्ट करना और कुछ अन्य लोगों से छुपाना, दोनों साथ-साथ ज़रूरी होता है। इसके लिए उपयोग में आने वाले कोड का विकास पूरे झुण्ड को बाँधकर रखता है, यह कोड प्रयोजन की समझ को सरल भी बनाता है और उसे न जानने वालों के लिए कुछ दुरूह भी। उस योग्यता के उद्‌भव के बारे में भी प्रश्न हैं जो इसे सम्भव बनाती है। मुझे लगता है कि यह एक अहम बिन्दु है, हमें उस योग्यता के बारे में सोचने की आवश्यकता है जो हमें दुनिया के बारे में फर्क तरह से बर्ताव करने और हम दुनिया के बारे में क्या मंशाएँ रखते हैं, इस बारे में सोचने की काबिलियत देती है। जो कुछ भी हमने देखा है उसमें हम कुछ नया जोड़ने, ऐसी चीज़ों में सम्बन्ध देख पाने जो काफी अलग-अलग जगहों पर स्थित हैं और नए निर्माण (construct) करने की भी योग्यता रखते हैं। यह निर्माण नये हथियारों व औज़ारों या फिर कुछ और भौतिक साधनों का हो सकता है अथवा कुछ नई रणनीतियों, नए सम्प्रेषण के तरीकों व नए विचारों, सम्भावनाओं और अनुमानों का भी। और ये ही वे योग्यताएँ हैं जो इन्सानी चेतना और सामर्थ्य के लिए बुनियादी हैं। क्योंकि हम एक-दूसरे से सीखते हैं; ऐसे समुदाय जो एक-दूसरे से बहुत दूर हैं वे भी एक-दूसरे को देखते समझते हैं और फिर विभिन्न प्रक्रियाओं के माध्यम से वे जिस चीज़ को पसन्द अथवा नापसन्द करते हैं, उसे ग्रहण भी करते हैं। वे यह भी चयन करते हैं कि उसमें से क्या वे अपनी ज़िन्दगी में शामिल करना चाहते हैं और क्या नहीं।

हम जानवरों को देखते हैं और फिर यह निर्णय लेते हैं कि अच्छा इस जानवर में यह खास क्षमता है और यदि मैं भी यही करना चाहता हूँ तो शायद यह औज़ार काम करे। यदि मैं इस औज़ार को काम में लेना चाहता हूँ तो मेरे पास क्या ढंग हो, कैसे मेरे पास भी यह ताकत हो पाएगी। पर इस सामर्थ्य के विकसित होने के लिए विभिन्न विचारों को पकड़ पाने और उनमें सम्बन्ध देख पाने की ज़रूरत होती है। एक अर्थ में वृहद कार्यकारी स्मृति (Larger Working Memory) की आवश्यकता होती है। और उस क्षेत्र में भी इन्सान जो कुछ कर सकता है वह जानवरों की अपेक्षा कहीं ज़्यादा है। इन्सान इतना सब कुछ, इतना अधिक कैसे कर पाते हैं इसकी व्याख्या हेतु हमारे पास दो प्रतियोगी परिकल्पनाएँ हैं। पहली यह कि भाषा अर्जन यंत्र का विकसित होना इसका मूल कारण है और इसी के परिणामस्वरूप संज्ञानात्मक योग्यताएँ बढ़ी हैं, या फिर संज्ञानात्मक योग्यताएँ, भाषा के साथ-साथ लेकिन स्वतंत्र रूप से बढ़ी हैं। यानी एक तरफ भाषा बढ़ रही है तो दूसरी तरफ, साथ-साथ ही, संज्ञानात्मक योग्यताएँ भी।

सकर्मत्व, साझी मंशाएँ व संज्ञानात्मक विकास

दूसरी परिकल्पना यह है कि संज्ञानात्मक योग्यताओं का विकास स्वयं की और अन्य इन्सानों की मंशाओं को पढ़ने व समझने के कारण भी है। साझा मंशाओं को निर्मित करने की ओर झुकाव और इस हेतु सशक्त प्रयास कि एक गुट या समूह में सभी मिलकर काम

करें ना कि अकेले-अकेले, व्यक्तिगत रूप से संज्ञान को बढ़ाने में मदद करता है। जो स्पष्टता अभी नहीं है, वह इस बारे में है कि क्या इन दोनों के उपजने का स्रोत एक ही है, या ऐसा है कि एक है और उसकी वजह से दूसरे का वजूद है। इन दोनों परिकल्पनाओं के हिमायती अपने-अपने विश्वास के सत्य होने के बारे में दावा करेंगे लेकिन यह भी है कि दोनों यथार्थ में होती हैं और ऐसा भी कह सकते हैं कि हालाँकि कुछ लोग कहते हैं कि यह विकास में एक-दूसरे से स्वतंत्र हैं परन्तु कई महत्वपूर्ण परिस्थितियों के विश्लेषण से लगता है कि ये दोनों एक-दूसरे पर निर्भर हैं। हम यह कह सकते हैं कि इस बारे में कोई सन्देह नहीं कि ये एक-दूसरे के साथ निर्मित होते हैं और पारस्परिक रूप से एक-दूसरे के विकास में मदद करते हैं। टोमासेलो (2009) तो कहेंगे कि इन क्षमताओं के विकसित होने का पथ समान ही होता है और यह सकर्मत्व की आवश्यकता के कारण है। यह समान पथ होता है - मस्तिष्क में और सामर्थ्य में परिवर्तन और इन क्षमताओं से उत्पन्न सम्भावनाओं के विकास के लिए इन्सानी समाज में रहने की ज़रूरत। यह योग्यता दो स्तरों पर काम करती है - पहला स्तर 'यहाँ और अब' और उस पर कुछ करने की योग्यता व उसी में अमूर्तता तथा दूरी की समझ भी सम्मिलित है। लेकिन तब एक मेटा-एबिलिटी (Meta-ability) यानी विचारों पर विचार करने की क्षमता, मानसिक मॉडल बनाने की क्षमता, अलग-अलग परिस्थितियों में व अलग-अलग ढंग से किसी क्रिया को करने की क्षमता भी होती है और जब हम स्कूली शिक्षा की बात करते हैं तब हम इसी तरह की काबिलियत यानी 'यहाँ और अब' वाले तात्कालिक कार्यों से आगे की अमूर्तता की बात करते हैं।

इसी में जब हम गणित की बात करते हैं तब हम व्यावहारिक गणित, वह गणित जो उपयोग में आता है, उसकी बात न कर एक अलग तरह के गणित की बात करते हैं। हम उन तत्वों के बारे में बात करते हैं जिनके बारे में कई अन्य जगह भी बात की गई है। रोहित धनकर ने भाषा, गणित और संगीत पर वर्ष 2009 में उदयपुर में हुए सेमिनार में भी चर्चा की थी। ये वे स्वायत्त वस्तुएँ हैं जो बिना किसी सन्दर्भ के काफी अर्थहीन होती हैं। अपने आप में इनका कुछ अर्थ नहीं होता। किसी चीज़ की रचना करने और उनका उपयोग करने की दृष्टि से देखें तो ये तत्व उपयोगी भी हो सकते हैं और अनुपयोगी भी। जब किसी के द्वारा ये सीखे या याद किए जाते हैं तो स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होता, वे बस वहाँ होते हैं। उनका कोई उपयोग नहीं होता। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) सुझाता है कि इन तत्वों को सीखने की अहमियत इस तथ्य में है कि ये हमारे दुनिया को देखने के नज़रिए में रद्दोबदल कर देते हैं। जैसे कि हम जानते हैं भाषा और शब्द भण्डार का होना अनुभवों को बढ़ाने में मदद करता है। महत्वपूर्ण बिन्दु यह है कि गणित का पूरा विषय, जैसा कि हम जानते हैं और जैसा हम स्कूल में पढ़ाने का प्रयास करते हैं, इस गणित में एक तत्व वो होता है जो इसे 'यहाँ और अब' से पृथक करता है। और यह महत्वपूर्ण है क्योंकि इन्सान होने की योग्यता होने का तात्पर्य ही यही है कि आप 'यहाँ और अब' से आगे कदम बढ़ाने की क्षमता रखते हैं। इसलिए दूसरा कदम है 'यहाँ और अब' की तात्कालिकता से आगे बढ़कर सभी अमूर्त वस्तुओं के साथ कार्य करने की योग्यता।

हम यह भी कह सकते हैं कि भाषा में इस अमूर्तता का एक रूप पद्य (Poetry) है जो 'यहाँ और अब' से बिलकुल पृथक हो सकता है। यह हमें उस दुनिया, उन विचारों में ले जाता है जो सन्दर्भ रहित हैं और समय में बँधे नहीं हैं। अलग-अलग लोग इसे अलग-अलग तरह से महसूस करते हैं, समझते हैं। यानी अलग-अलग लोगों के लिए इसके अलग-अलग अर्थ हो सकते हैं। हर साहित्य में यह तत्व मौजूद होता है लेकिन पद्य में इसकी उपस्थिति तुलना में कहीं ज़्यादा होती है। यह कहा जा सकता है कि संगीत भी इसी प्रकार का होता है क्योंकि संगीत की अभिव्यक्तियाँ भी अलग-अलग अर्थ व समझ प्रतिबिम्बित करती हैं। ये कुछ इस तरह की संरचनाएँ या ढाँचे होते हैं जिनमें अर्थ व स्व-अभिव्यक्तियाँ पाठक/श्रोता अथवा जो भी उनसे अन्तःक्रिया कर रहा है, उसके द्वारा दी जाती है। जो इसमें मशगूल होते हैं व इससे जुड़ते हैं वही तर्क करते हैं कि यह क्या कह रही हैं।

गणित, भाषा व संगीत - क्या जुड़ाव?

अब सवाल उठता है कि इन सभी (भाषा, गणित, संगीत) के बीच क्या जुड़ाव है, क्या सम्बन्ध है? क्या भाषाई योग्यता सिर्फ बुनियादी व्याकरण तक ही सीमित है और इसलिए यह कुछ मूलभूत बातों को सीखने के लिए एक ट्रिगर है अथवा यह बस भाषा अर्जन के लिए ही एक ट्रिगर है। क्या इसके बाद व इसके साथ होने वाला संज्ञानात्मक विकास इसके बाहर है या इसके भीतर ही है? जो यह मानते हैं कि भाषा एक अलग प्रकार की संज्ञानात्मक योग्यता है, उनके लिए यह एक सरल समस्या है। लेकिन जिन्हें लगता है कि यह खास तौर पर आनुवंशिक है, उनके सामने प्रश्न है कि यह आगे कैसे विकसित होती है। वंशाणु (Gene) की क्या भूमिका है और यह अन्य वंशाणुओं से कैसे सम्बद्ध होता है? मैं भाषा विज्ञान के बारे में बात नहीं कर रहा, क्योंकि भाषा विज्ञान 'भाषा के बारे में' है। अत: जब हम स्कूल में भाषा सीखने-सिखाने के बारे में बात करते हैं तब हम पद्य सिखाने की बात करते हैं, कहानियों को समझने की बात करते हैं, नाटक समझने की बात करते हैं, विमर्श (Discourse) को समझने की बात करते हैं और यह एक बार फिर माँग करता है अलग-अलग नज़रियों, विचार पद्धतियों व विभिन्न परिस्थितियों के बारे में सोचने, उनको महसूस करने व उनसे सहानुभूति रख पाने की क्षमता की। यहाँ हमें यह सोचने की आवश्यकता है कि ये कहाँ स्थित हैं और दिमाग की अन्य योग्यताओं के साथ ये कैसे जुड़ती हैं। अत: मूल बिन्दु यह है कि इस सबके क्या निहितार्थ हैं? यदि इन सभी का आधार एक सांस्कृतिक सम्पत्ति को रचने हेतु व्यक्तिगत, साझा और सामूहिक सकर्मकत्व है और इन सकर्मकत्वों (व्यक्तिगत, साझा व सामूहिक) व पैटर्नों के साथ काम करने के लिए लगातार बढ़ती व मज़बूत होती योग्यताओं का उपयोग है, तब क्या ये मंशा पढ़ पाना, सकर्मकत्व की उत्कण्ठा आदि बहुत ही महत्वपूर्ण हो जाती हैं? तात्पर्य यह है कि चाहे हम भाषा शिक्षण कर रहे हों, चाहे गणित शिक्षण या संगीत शिक्षण, प्रत्येक में अमूर्त पैटर्नों के साथ कार्य करने की योग्यता ज़रूरी है। क्या यह योग्यता ही हरेक के केन्द्र में है? निश्चित रूप से। हम यह तो जानते हैं कि अमूर्त तत्वों के साथ कार्य करने की योग्यता आवश्यक है और अमूर्त तत्व के साथ कार्य करने के दो तरीके हैं - एक, आप उनका उपयोग

करने की योग्यता रखते हैं; और दूसरा, आप उनकी खोज पड़ताल करने की योग्यता रखते हैं और उनकी सहायता से कुछ नया रच पाने की योग्यता रखते हैं।

यह उसी प्रकार है जैसे आप जब गणित में किसी समस्या को हल करते हैं तब हर चरण में, आप संक्रियाओं के कुछ खास पैटर्नों का अनुसरण करते हैं जो पहले से परिभाषित हैं। यह आवश्यक है कि आप जो उनके साथ कर रहे हैं उसके बारे में बात कर पाएँ। आपको पता होना चाहिए कि वहाँ क्या हो रहा है, ताकि वे एक तरह से आपके नियंत्रण में हो।

जब हम संगीत के बारे में बात करते हैं तो वहाँ एक खास ढाँचा उपलब्ध है जिसमें एक खास प्रकार की आज़ादी है और साथ ही कुछ सीमाएँ भी हैं। लेकिन इस आज़ादी और सीमाओं के अन्दर आपको अन्वेषण की अनुमति है। अत: हम किसी भी क्षेत्र में देखें, मुख्य बिन्दु यह है कि ये अमूर्त तत्व हैं, कुछ खास नियम हैं और आप उनके साथ खेलते हैं। इन नियमों और उनसे खेलते हुए नया-नया गढ़ने की सम्भावना भाषा में बहुत ही ज़्यादा है, लेकिन गणित व संगीत में भी कम नहीं है। भाषाई ढाँचा आम तौर पर जाना पहचाना होता है, ज़्यादा काम में लिया जाता है और सार्वभौमिक तौर पर अर्जित किया जाता है। गणित व संगीत के भी कुछ तत्व अर्जित किए जाते हैं लेकिन चूँकि इनसे ज़्यादा गुत्थम-गुत्था होने का कोई मकसद नहीं होता, अत: इन तत्वों के उत्पादन की ज़रूरत नहीं पड़ती। अन्य तरह की संस्कृतियों व समाजों में इनका कितना सार्वभौमिक विकास हो सकता है, यह शोध किया जा सकता है।

अत: यदि प्रधान चालक उद्देश्य और मंशा है तब यदि हमारे पास एक फर्क तरह का समाज होता जहाँ गणितीय सांकेतिक भाषा या संगीत के उतार-चढ़ाव की ज़रूरत होती तो क्या ये भी अर्जित किए जाते? या फिर ऐसा है कि बुनियादी वंशाणु केवल भाषाई संकाय ही उत्पन्न कर सकते हैं और बाकी अन्य सामान्य संज्ञानात्मक योग्यताएँ ही हैं? कुछ भी हो, अलबत्ता अभी कुछ ज़्यादा विकसित भाषाई क्षमता है और इसके विकास में भाषा के यंत्र की महत्ता है। किन्तु अमूर्त तत्वों के साथ कार्य कर पाने की योग्यता, अमूर्त पैटर्नों के साथ कार्य करने की योग्यता और नियमों का अनुसरण कर पाने का अनुशासन, इन तीन विषयों (भाषा, गणित, संगीत) को सीखने के लिए केन्द्रीय प्रतीत होता है।

अन्त में, एक अन्य विचार-लड़ी जो मैं आपके सामने रखना चाहता हूँ वह यह है कि हम जानते हैं कि कुछ संज्ञानात्मक क्षेत्र ऐसे हैं जो बच्चे बाद की अवस्थाओं में अर्जित करते हैं। उदाहरण के लिए, दो चरणों में श्रेणियाँ बनाने के लिए आवश्यक तर्क की समझ। इसी तरह विचारक्रम लेखन और अनौपचारिक परिस्थितियों में आयतन का संरक्षण आदि भी शायद बाद में आता है। ये उदाहरण दर्शाते हैं कि कुछ संज्ञानात्मक योग्यताएँ जो इतनी ज़ाहिर नहीं होतीं, वे बाद में अर्जित की जाती हैं। अत: गणित, भाषा, संगीत और सौन्दर्यशास्त्र के साथ काम करते वक्त हमें उन उभयनिष्ठ तत्वों को ध्यान में रखने की ज़रूरत है, जो इन सब में अन्तर्निहित हैं। हम इन तत्वों के साथ काम करने, इनके संयोजन के साथ काम करने के विचार व कर पाने की काबिलियत कैसे अर्जित करते हैं? कोई गणितीय रचना हो या भाषाई या संगीतीय रचना, हम बच्चों में इनके तत्वों को समझने व इनके अन्वेषण करने और इनके

सन्दर्भ में वे जो भी जानते हैं उसको अभिव्यक्त करने और साथ ही इन तत्वों का उपयोग कर कुछ रचने इत्यादि की योग्यता कैसे निर्मित कर सकते हैं और बढ़ा सकते हैं - यह शिक्षाविदों के लिए एक चुनौती है।

भाषा के मामले में ऐसा लगता है कि जब 'यहाँ और अब' की तात्कालिक स्थितियों में उद्देश्य व मंशाएँ स्पष्ट हों तब दो चरण वाले नियम ज़्यादा आसानी से सीखे जाते हैं। अतः क्या कठिनाई सिर्फ इस वजह से है कि मंशाएँ और उद्देश्य हमें इस कदर प्रभावित करते हैं कि अमूर्त परिस्थितियों में यह सब कर पाने की हमारी योग्यता में ही कठिनाई होती है।

एक अन्य बिन्दु जो महत्वपूर्ण है वह यह कि, ये सभी एक संवाद हैं। जैसा कि भाषा, विचार और गणित सम्बन्धी अध्याय में रोहित धनकर ने इंगित किया था, ये संवाद आन्तरिक (यानी खुद से) भी हैं और दूसरों से भी। (रोहित धनकर के ऊपर इंगित सेमिनार में प्रस्तुत वक्तव्य से) मुझे लगता है कि यह कक्षाओं के लिए अहम सवाल है। यह समझ पाने के लिए कि यदि हम गणित शिक्षण या कविता अध्ययन या फिर किसी और अमूर्त धारणाओं के पुंज की बात करना चाहते हैं, तो यह कैसे सुनिश्चित करें कि बच्चे गणित की इन कक्षाओं से निकलकर उन सवालों को दिमाग में रखें जिनके बारे में वे अपने आप से चर्चा करना चाहते हैं। और यदि संगीत की दृष्टि से बात करें तो वे सुर, ताल और राग के साथ अपने ही दिमाग में कैसे खेलना शुरू करें कि वे खुद नई संगीत की भाषा बना सकें। हम यह कैसे सम्भव बना पाएँ कि बच्चे स्वयं ही इन अमूर्तताओं से खेलना शुरू करें। अभी तक बच्चे इन अमूर्तताओं को व्याख्यान के तरीकों से सीखते आए हैं। कैसे हम बच्चों को इन सम्भावनाओं को गढ़ने और इनका अन्वेषण करने दें और साथ ही साथ उन ढाँचों को विकसित करें जो इन्सानी चेतना और इन्सानी ज्ञान में पहले से ही मौजूद हैं।

स्रोत

- हृदय कान्त दीवान, 2009, "म्युज़िक, लैंग्वेज एंड मैथेमैटिक्स", विद्या भवन सोसाइटी, उदयपुर में हुई संगोष्ठी में प्रस्तुत वक्तव्य के आधार पर रचित।

सन्दर्भ

- एम टोमासेलो, 1999, *द कल्चरल ओरिजिन ऑफ ह्यूमन कॉग्नीशन*, केम्ब्रिज, मैसेचुसेट्स, लंदन: हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- एम टोमासेलो, 2009, *वाई वी कोऑपरेट*, केम्ब्रिज: एमआईटी प्रेस।
- एम टोमासेलो, 2014, *ए नैचुरल हिस्ट्री ऑफ ह्यूमन थिंकिंग*, केम्ब्रिज, मैसेचुसेट्स, लंदन: हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।